जैनधर्म में देवियों का स्वरूप

डॉ० पुष्पेन्द्र कुमार शर्मा

जैनधर्म प्रमुखतया मन्दिरों का धर्म है अर्थात् मन्दिर में उपासना हेतु जाना जैनधर्म का एक प्रमुख अंग है। मन्दिर ही जैनधर्म के संग्रहालय हैं। अतएव भारत में असंख्य जैन-मन्दिर उपलब्ध होते हैं। जैन साधक मूर्तियों को घरों में स्थापित नहीं करते, परन्तु मन्दिरों में ही जाकर पूजा करते हैं। जैन-मन्दिरों में देवताओं, तीर्थङ्करों, देवियों, यक्षों आदि की मूर्तियां स्थापित की जाती हैं। देवताओं की मूर्तिस्थापना सम्भवतः हिन्दूधर्म का प्रभाव हो क्योंकि हम यह देखते हैं कि सारे हिन्दू देवी-देवताओं को जैन-धर्म में स्थान मिला है।

जैनधर्म में छठी और सातवीं शताब्दी के उपरान्त देव-समुदाय एक बहुत बड़े स्तर पर विकसित हो चुका था। मूर्तियों की निर्माणविधि, प्रतिष्ठा आदि विषयों पर यथेष्ट मात्रा में ग्रन्थ उपलब्ध होते हैं। पूजित देवताओं में कुछ देवताओं की पूजा केवल श्वेताम्बर सम्प्रदाय या दिगम्बर सम्प्रदाय तक ही सीमित रही है। जैनधर्म में देवियों का भी एक बहुत बड़ा वर्ग उपलब्ध होता है। इनमें से कुछ श्वेताम्बर पन्थ की हैं, उन देवियों के नाम, लक्षण, पूजाविधि भिन्न हैं और कुछ दिगम्बर सम्प्रदाय की देवियाँ हैं जिनकी पूजाविधि, नाम, लक्षण और स्वरूप भिन्न हैं।

जैनधर्म के प्राचीन ग्रन्थों में देवियों को तीन वर्गों में विभाजित किया गया[1]—

१. प्रासाद देवियाँ—जिन देवियों की मूर्तियाँ मन्दिरों में प्रतिष्ठापित हैं तथा सर्वत्र मिलती हैं।

२. कुल देवियाँ—वे तान्त्रिक देवियाँ जिनको भक्तलोग अपने-अपने कुल देवता के रूप में पूजते हैं एवं जिनकी पूजा गुरु द्वारा प्रदत्त मन्त्रों द्वारा की जाती है। चण्डी, चामुण्डा आदि कुलदेवियां हैं।

३. सम्प्रदाय देवियाँ—किसी सम्प्रदाय की देवियाँ या जाति-विशेष की देवी अम्बा, सरस्वती, गौरी, त्रिपुरा, तारा आदि देवियाँ इस वर्ग में आती हैं।

ऐसा प्रतीत होता है कि यह विभाजन सैद्धान्तिक नहीं है परन्तु इससे यह अवश्य ज्ञात होता है कि तान्त्रिक देवियाँ जैनधर्म में प्रवेश पा गई थीं और पूजा की वस्तु थीं। ये तान्त्रिक देवियाँ—काली, चामुण्डा, दुर्गा, ललिता, कुरुकुल्ला, कालरात्रि आदि केवल श्वेताम्बर सम्प्रदाय में ही प्रचलित रहीं।

जैनधर्म में मूर्तिलक्षणों के आधार पर देवियों के तीन वर्ग किये जा सकते हैं—

१. शासन देवियाँ—ये देवियाँ जैनधर्म या संघ का पालन करती हैं, भक्तों के विघ्न नाश करती हैं एवं मन्दिरों में में तीर्थंकरों के साथ इनकी मूर्तियाँ मिलती हैं। ये २४ होती हैं। चक्रेश्वरी, अम्बिका आदि इनमें प्रमुख हैं।[2]

२. विद्या देवियाँ—ये विद्या की अधिष्ठात्री देवता हैं। इनकी संख्या सोलह बतलाई गई है। इन्हें श्रुतदेवियाँ भी कहा जाता है। इनमें सरस्वती, काली, ज्वालामालिनी आदि प्रमुख हैं।

३. यक्षिणी देवियाँ—जैनधर्म में यक्षों एवं यक्षिणियों का देव पद स्वीकृत किया गया है। ये अधिकतर धन की देवियाँ हैं। इनमें भद्रकाली, भृकुटी, तारा आदि प्रमुख हैं।

---

१. तत्र देव्यस्त्रिधा प्रासाददेव्यः संप्रदायदेव्यः कुलदेव्यश्च। प्रासाददेव्यः पीठोपपीठेषु गुह्यस्थिता भूमिस्थिता प्रासादस्थिता लिंगरूपा वा स्वयम्भूतरूपा वा मनुष्यनिर्मितरूपा वा। संप्रदायदेव्यः अम्बासरस्वती—त्रिपुरातारात्राभृतयो गुरूपदिष्टमन्त्रोपासनीयाः। कुलदेव्यः चण्डीचामुण्डाकन्टेश्वरीव्याधराजीप्रभृत्तयः।

२. या पाति शासनं जैनं संघप्रत्यूहनाशिनी।
साभिप्रेतसमृद्धयर्थं भूयाच्छासनदेवता॥ —(हेमचन्द्र)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इन देवियों की मूर्ति का निर्माण करते हुए कलाकार देवी के वर्ग का पूरा-पूरा ध्यान रखते थे। अर्थात् शासनदेवी, विद्यादेवी या यक्षिणी के लक्षण या चिह्नों का स्पष्ट एवं सूक्ष्मतर विवेचन प्रस्तुत किया जाता था। मूर्तियाँ मथुराकाल से लेकर आजतक उपलब्ध होती रही हैं। मूर्तिकला को जीवित रखने का सतत प्रयास कलाकारों ने किया है। इनमें से बहुत-सी देवियाँ तो हिन्दू देवियों के समान ही हैं और कुछ देवियों ने जैनधर्म की स्पष्ट छाप रखते हुए भी हिन्दू देवियों के नाम, रूप और आयुध आदि धारण किये हैं। बहुतसी मूर्तियाँ मूर्तिकला की दृष्टि से भव्यतम कलाकृतियाँ हैं।

जैन मतानुयायी तीर्थङ्करों के साथ ही साथ अन्य देवी-देवताओं की भी पूजा करते हैं। इनमें प्रमुख हैं—सरस्वती, अम्बिका और पद्मावती। इसी नाम की हिन्दू देवियों से भिन्नता दिखलाने के लिए इनको विभिन्न तीर्थङ्करों के साथ-साथ सम्बद्ध कर दिया गया है। देवी के मुकुट पर उसी तीर्थङ्कर की प्रतिमा होती है जिसके साथ वह सम्बद्ध होती है। इन मूर्तियों के निर्माण में शास्त्रीय विधियों का पालन करते हुए भी कलात्मकता का पूर्ण ध्यान रखा गया है। ये मूर्तियाँ उच्च भावात्मक कला, भंगिमा एवं अभिव्यक्ति का उदाहरण हैं। कुछ देवियाँ केवल मान्त्रिक देवियाँ हैं।

सरस्वती— सरस्वती देवी की मूर्तियाँ तीन प्रकार की उपलब्ध होती हैं—दो भुजावाली देवी, चतुर्भुजी देवी एवं चार से अधिक भुजाओं से युक्त। मुख्य रूप से सरस्वती देवी के हाथ में पुस्तक होती है एवं हंस को उसका वाहन दिखलाया गया है। एक बहुत ही सुन्दर सरस्वती की मूर्ति सिरोही स्टेट राजस्थान के एक जैन मन्दिर से प्राप्त हुई है। इसका समय लगभग आठवीं शताब्दी माना जाता है। इसमें सरस्वती देवी पद्मासन पर स्थित है तथा उसके दोनों हाथों में कमल सुशोभित हो रहे हैं।[1]

राजपूताना संग्रहालय में एक पत्थर की सरस्वती मूर्ति बहुत ही सुन्दर है जो बाँसवाड़ा राज्य से प्राप्त की गई है। देवी की चार भुजाएँ हैं। बायीं भुजाओं में पुस्तक एवं वीणा है तथा दायीं भुजाओं में माला एवं कमल सुशोभित हैं। मुकुट में एक छोटे आकार की शिवमूर्ति जड़ी हुई है। एक छोटी संगमरमर की सरस्वती मूर्ति अचलगढ़ से प्राप्त हुई है। इसमें चार भुजाओं वाली देवी के ऊपर के दोनों हाथों में वीणा और पुस्तक है तथा निचले हाथों में माला व कमण्डलु हैं। देवी इसमें मयूरवाहन हैं।[2]

इसी प्रकार सरस्वती की एक बहुत ही सुन्दर प्रतिमा बीकानेर से प्राप्त हुई है जिसे मध्यकालीन मूर्तिकला का भव्यतम उदाहरण कहा जा सकता है। यह सफेद संगमरमर पर बनी है एवं सौम्यस्वरूपा है। देवी की चार भुजाएँ हैं। इनकी ऊपर वाली भुजाओं में कमल एवं पुस्तक है और निचली भुजाओं में कमण्डलु और मुद्रा। देवी खड़ी हुई हैं। सरस्वती देवी की बहुत ही सुन्दर प्रतिमाएँ आबू के जैन मन्दिर में भी प्राप्त होती हैं। चार भुजाओं वाली देवी के हाथों में वीणा, पुस्तक, माला और कमल अंकित हैं। इसी मन्दिर (विमल वसही) में सरस्वती की सोलह भुजा वाली प्रतिमा भीतरी छत पर अंकित की गई है। यह विद्या की देवी हैं, भद्रासन में स्थिर हैं, दोनों तरफ नृत्य करते हुए परिचारक खड़े हैं। आठ भुजाओं के विषय दृष्टिगोचर होते हैं—शेष पहचान में नहीं आते हैं। सिंहासन में हंस की प्रतिमा दिखाई दे रही है। इसी प्रकार तेजपाल द्वारा निर्मित मन्दिर में सरस्वती की सुन्दर प्रतिमा विद्यमान है। भद्रासन पर बैठी हुई देवी के हाथों में पुस्तक के स्थान पर कमण्डलु प्रदर्शित किया गया है।

मथुरा से प्राप्त जैनस्तूप में सरस्वती और अम्बिका की प्रतिमाएँ मिली हैं। सरस्वती की मूर्ति का शिर विद्यमान नहीं है। बहुत ही कलात्मक वस्त्र पहने हुए हैं। दोनों तरफ एक-एक परिचारिका विद्यमान है। इससे यह ज्ञात होता है कि बड़े प्राचीन काल से जैनधर्म में सरस्वती की पूजा होती रही है। वैसे भी विद्यादेवियों की पूजा जैनधर्म की अपनी विशेषता है। १६ विद्यादेवियाँ या श्रुतदेवियाँ केवल जैन देव-परिवार में ही प्राप्त होती हैं।[3]

सरस्वती वीणापुस्तकधारिणी तथा हंसवाहना है। यह हिन्दू सरस्वती देवी के समान ही है। केवल जिन मूर्ति मुकुट में होने पर जैन देवी है ऐसा प्रकट होता है।

अम्बिका देवी—इस देवी की पूजा बड़े प्राचीन काल से जैन लोग करते रहे हैं। यह देवी जैन आम्नाय की देवी स्वीकार की गयी है, जिस प्रकार बौद्धों की तारादेवी हैं। यद्यपि २२वें तीर्थंकर श्री नेमिनाथ के साथ इन्हें सम्बद्ध माना जाता है किन्तु सभी तीर्थंकरों के साथ इनकी प्रतिमाएँ उपलब्ध होती हैं। मथुरा में इनकी सबसे प्राचीन मूर्ति प्राप्त हुई है। यह मूर्ति लाल पत्थर की है। श्री जिनप्रभ-

---

1. Progress report of archaeological survey, West region—1905-1906, page 48
2. Jainism in Rajasthan : K.C. Jain, p.133
3. श्रुतदेवतां शुक्लवर्णां हंसवाहनां चतुर्भुजां वरदकमलान्वितदक्षिणकरां पुस्तकाक्षमालान्वितवामकरां चेति। पुस्तकाक्षमालिकाहस्ता वीणाहस्ता सरस्वती।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूरि अपने विविधतीर्थकल्प में इनको मथुरा तीर्थ की अधिष्ठात्री देवी मानते हैं तथा सिंहवाहिनी बताते हैं। इनके हाथ में प्रायः आम्रफल एवं बालक विद्यमान रहते हैं। एलोरा की प्रसिद्ध गुफाओं में भी अम्बिका देवी की बहुत-सी मूर्तियां गढ़ी हुई हैं। अम्बिकाजी की विशाल मूर्ति आम्र वृक्ष के नीचे बैठी हुई दिखलाई गई है। श्री नेमिनाथ उनके मुकुट पर विराजमान हैं। सिंह भी विद्यमान है तथा आम्र के वृक्ष पर मयूर दृष्टिगत होता है।

जैन आचार्यों एवं भक्तों ने समय-समय पर विभिन्न उद्देश्यों के लिए अम्बिका देवी की आराधना की है। कभी शास्त्रार्थ में विजय प्राप्त करने के लिए, कभी अपना सिद्धान्त स्थापित करने के लिए और समाज में सफलता के लिए इनकी पूजा की जाती रही है। अम्बिका देवी की प्राचीन मूर्तियाँ नवमुनि गुफाओं, खण्डगिरि की गुफाओं एवं धाङ्क (काठियावाड़) में प्राप्त होती हैं। डॉ० सांकलिया के अनुसार इनका काल तीसरी या चौथी शताब्दी माना जा सकता है। सरस्वती और अम्बिका की इन प्राचीन मूर्तियों की विशेषता यह है कि ये दोनों देवियां स्वतन्त्र देवता के रूप में प्राप्त होती हैं। शासन देवता या गौण देवता के रूप में नहीं। इन दोनों देवियों की पूजा प्राचीन काल से चली आ रही है। इनका वाहन सिंह दिखलाया गया है। दसवीं शती की एक धातु मूर्ति अम्बिका देवी की प्राप्त हुई है। उनकी बायीं भुजा में बच्चा है एवं दायीं में.....है। बारहवीं शताब्दी की एक विशाल मूर्ति मोरखाना से प्राप्त हुई है। इसमें देवी सिंहवाहिनी प्रदर्शित हैं। प्रतिमालक्षण की दृष्टि से ये निश्चित रूप से जैनदेवी कही जा सकती हैं। मूर्तिकला का सुन्दर नमूना है। नरैना के मन्दिर में अम्बिका की तीन मूर्तियाँ सुरक्षित हैं। इनमें देवी सिंह पर बैठी हुई हैं। चौदहवीं शती की धातुमूर्त्ति जयपुर में सुरक्षित है। देवी सिंह पर आरूढ़ हैं एवं शिशु उनकी गोद में है। तमिलनाडु के जैन मन्दिर में विशाल तथा मध्यभाग में स्थित देवी प्रतिमा है। सिर पर मुकुट और कानों में कुण्डल शोभित हैं। सिंह पर बैठी हुई हैं, दो भुजाएँ हैं। एक हाथ से किसी बालिका का स्पर्श कर रही हैं तथा दूसरे में गुच्छा है। चारण पर्वत पर भी अम्बिका की मूर्ति मिली है। यह एक विशाल मूर्ति है, दो भुजाएँ, सिंह आदि सभी कुछ है। कहीं-२ इस देवी को नेमिनाथ की यक्षिणी भी बतलाया गया है। प्रारम्भिक काल में तमिलनाडु में इस देवी की काफी पूजा होती रही है। जैन चित्रकला में भी अम्बिका देवी के बहुत अच्छे चित्र उपलब्ध होते हैं। पद्मावती, ज्वालामालिनी आदि देवियों के २०० वर्ष पुराने सुन्दर चित्र जैन भाण्डागारों में सुरक्षित हैं।

विमलशाह के प्रसिद्ध जैनमन्दिर में २० भुजाओं वाली अम्बिका देवी की मूर्ति भीतरी छत पर विद्यमान है। ललितासन में देवी सिंह पर आरूढ़ हैं। उनकी भुजाओं में खड्ग, शक्ति, सर्प, गदा, ढाल, परशु, कमण्डलु, अभयमुद्रा और वरदमुद्रा दीख रही हैं। शेष भुजाओं के पदार्थ टूटे हुए होने के कारण पहचान में नहीं आते हैं। देवी ने सिर पर मुकुट, कानों में कुण्डल, गले में मोतियों की माला, कमर में करधनी, हाथों में कंगन, पैरों में नूपुर, अधोवस्त्र (साड़ी) और दुपट्टा धारण किया हुआ है।

ज्वालामालिनी देवी—यह यक्षिणी है और आठवें तीर्थंकर श्री चन्द्रप्रभ के साथ रहती है। इसकी पूजा दिगम्बर सम्प्रदाय में की जाती है। भैंस इसका वाहन है, आठ भुजाएँ हैं जिनमें आयुध हैं। इसके वर्णन के अनुसार यह ज्वालारूप है। दो हाथों में सर्प तथा आयुध होते हैं। कर्नाटक में एक जैन मन्दिर बेलगोला में चन्द्रप्रभ के साथ ज्वालामालिनी की प्रतिमा है। केवल दो भुजाएँ हैं एवं सिंह इनका आसन है।

जैन देवसमुदाय में ज्वालामालिनी या महाज्वाला नाम की एक देवी हैं। यह देवी भी भैंसे पर बैठती हैं तथा इनकी आठों भुजाओं में आयुध होते हैं। पोत्तूर (तमिलनाडु) में एक जैन मन्दिर में इस देवी की मूर्त्ति है। देवी की आठ भुजाएँ हैं जिनमें से दाएँ हाथों में चक्र, अभयमुद्रा, गदा एवं शूल हैं और बायीं भुजाओं में शंख, ढाल, कपाल और पुस्तक विद्यमान हैं। मुखमण्डल ज्वालामय दिखलाया गया है। यह मूर्ति हिन्दुओं की महाकाली से काफी समानता रखती है। मद्रास में यह प्रचलित है कि जैनमुनि हेलाचार्य (नवम् शती) ने ज्वालामालिनी देवी की पूजा प्रचलित की थी। नीलगिरि पर्वत पर अग्नि देवी की स्थापना की गई है। इस देवी के मन्त्र और कल्प स्वतन्त्र रूप से लिखे गये हैं। इस देवी की पूजा प्रायः तान्त्रिक विधि से होती रही है और यह यक्षिणी पूजा का प्रारम्भ कराती है। नरसिंह पुर के मन्दिर में ज्वालामालिनी की प्रतिमा अष्टभुजा आयुधधारिणी मिलती है। इस देवी की कर्नाटक में पूजा अधिक प्रचलित है।

सिद्धायिका देवी (यक्षिणी)—तमिलनाडु में प्राप्त मूर्तियों में एक स्त्री देवता को युद्ध करते हुए दिखलाया गया है तथा वह सिंह पर आसीन है। उसके दो हाथों में धनुष बाण हैं और शेष दो में दूसरे आयुध हैं। देवी के सिंह ने शत्रु के हाथी को धराशायी किया हुआ है। यह सिद्धायिका नाम की यक्षिणी है जो महावीर जी की रक्षा में तत्पर रहती है। इनकी एक मूर्त्ति अन्नामलाई स्थान से भी प्राप्त हुई है।

पद्मावती देवी—इस देवी की पूजा प्राचीन काल से कर्नाटक में होती आ रही है। नवीं-दसवीं शताब्दी ई० के उत्तरवर्त्ती शिलालेखों एवं प्रतिमाओं से इस तथ्य की प्रामाणिक पुष्टि होती है। यद्यपि यह पार्श्वनाथ की यक्षिणी है फिर भी स्वतन्त्र रूप से भी इस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देवी की पूजा होती रही है। 'पद्मावती-देवी-लब्ध-वर-प्रासाद' जैसे विशेषण मिलते हैं। कुछ लोग इसकी मान्यता द्वितीय शताब्दी से मानते हैं, परन्तु इसके व्यापक प्रभाव के प्रमाण प्रायः दसवीं से १५वीं शती तक के मिलते हैं। अनेक ग्रन्थ, माहात्म्य और लोककथाएँ इस देवी का उल्लेख करते हैं। ग्यारहवीं शती में मल्लिषेण द्वारा रचित 'भैरवपद्मावती कल्प' प्रसिद्ध है। मन्त्रविद्या और तन्त्रसमुदाय की विधि द्वारा इन देवियों की पूजा होती थी। परवर्त्ती काल की बहुत सारी प्रतिमाएँ इस बात को प्रमाणित करती हैं। पद्मावती देवी के स्वतन्त्र रूप में मन्दिर भी बनाये गये हैं जिनमें नागदा का प्रसिद्ध मन्दिर भी है।

प्रायः यह देवी पार्श्वनाथ जी के साथ ही पायी जाती है। बारहवीं शताब्दी की पाषाणमूर्ति बघैरा में पायी गई है। इसी प्रकार की एक धातु मूर्ति जयपुर के सिरमौरिया मन्दिर में स्थित है। इसका काल १६०० ई० बतलाया जाता है। देवी के दोनों हाथों में शिशु हैं आर मुकुट पर पार्श्वनाथ की प्रतिमा बनी हुई है। जयपुर के दूसरे मन्दिर में पद्मावती की पाषाण मूर्तिस्थापित है। देवी की चार भुजाएँ हैं, शान्तमुद्रा है एवं चारों भुजाओं में चार पदार्थ हैं। तमिलनाडु में प्राप्त प्रतिमाओं में इनकी मूर्ति भी मिली है। एक चरण कमल पर स्थित, दूसरा नीचे की ओर लटका हुआ है। सिर पर सर्पफणों का मुकुट है। चार भुजाएँ हैं, एक में सर्प, दूसरे में फल, एक में गदा तथा एक से दूसरे का स्पर्श है। दो परिचारिकाएँ भी सेवारत हैं।

पद्मावती देवी के साथ सर्प का सम्बन्ध सदा से रहा है तथा वह पातालवासिनी हैं।[1] मूर्तिकला में सर्प तथा कमल दोनों ही सुस्पष्टतया अंकित किये जाते रहे हैं। बंगाल में मनसा देवी सर्पों की देवी के रूप में पूजी जाती हैं। पर ये दोनों देवी एक ही हैं अथवा भिन्न-२ हैं ऐसा कोई निर्णय अभी नहीं किया जा सकता है।

महाकाली—श्वेताम्बर सम्प्रदाय में यह देवी कमलों पर स्थित है। चार भुजाओं वाली है तथा वरदमुद्रा, अंकुश, पाश और कमल धारण किये हुए है। यह यक्षी भी है। विद्यादेवी के रूप में प्रसिद्ध है तथा मन्दा देवी है। विद्यादेवी के रूप में मुर्गे पर बैठी हुई है तथा वज्र और कमल हाथ में लिए हुए हैं।[2]

इस देवी का नाम दिगम्बर सम्प्रदाय में वज्रशृंखला भी है। हंस इसका वाहन है तथा इसकी भुजाओं में सर्पपाश, माला एवं फल सुशोभित हैं[3]—

यह भी यक्षिणी तथा विद्यादेवी दोनों हैं। श्वेताम्बर पन्थ में इसकी काली, महाकाली, कालिका आदि नामों से पूजा करते हैं। देवी का रंग काला है, कमल पर स्थित हैं। तन्त्रों की देवी काली भी इसी प्रकार की है परन्तु वह कमलासना नहीं है।[4]

चक्रेश्वरी—श्वेताम्बर तथा दिगम्बर दोनों सम्प्रदायों में देवी को चक्रधारिणी एवं गरुडवाहिनी बतलाया गया है। श्वेताम्बर सम्प्रदाय के अनुसार देवी अष्ट-भुजा है तथा बाण, गदा, धनुष, वज्र, शूल, चक्र एवं वरद मुद्रा के चिह्न हैं। दिगम्बर सम्प्रदाय में देवी की या तो चार भुजाओं वाली प्रतिमाएँ हैं या द्वादश भुजाएँ होती हैं। द्वादशभुजा देवी की आठ भुजाओं में चक्र विद्यमान है।

यह देवी पहले तीर्थंकर ऋषभदेव की शासन देवता है। गरुड एवं चक्र आदि लक्षणों से एवं नाम से भी यह देवी हिन्दुओं की देवी वैष्णवी से या तो पर्याप्त समानता रखती है या उससे बहुत अधिक प्रभावित है। कुछ मूर्तिकारों ने हाथों में पाश अंकित करके इस देवी को यक्षी परिवार की देवता माना है। परन्तु चक्र ही इसका मुख्य लक्षण है। बहुत सारी प्रतिमाएं स्वतन्त्ररूप में या तीर्थंकर के साथ प्राप्त होती हैं। यथा—देवगढ़ तथा मथुरा से प्राप्त मूर्ति दस भुजाओं वाली है। उदयगिरि (उड़ीसा) से प्राप्त प्रतिमा द्वादश भुजा है।[5]

---

१. तथा पद्मावती देवी कुर्कुटोरगवाहना।
स्वर्णवर्णा पद्मपाशभृद्दक्षिणकरद्वया।
फलांकुशधराभ्यां च वामदोर्भ्यां विराजिता॥ —हेमचन्द्र

२. तथोत्पन्ना महाकाली स्वर्णहुक् पद्मवाहना।
दधाना दक्षिणो बाहुः सदा वरदफाशिनौ।
मातुलिङ्गांकुशधरौ परौ बाहू च बिभ्रतौ। —हेमचन्द्र

३. वरदा हंसमारूढा देवता वज्रशृंखला।
नागपाशाक्षसूत्रोरुफलहस्ता चतुर्भुजा॥ (प्रतिष्ठासारसंग्रह)

४. कालिकादेवी श्यामवर्णां पद्मासनां चतुर्भुजाम्।
वरदपाशाधिष्ठितदक्षिणभुजां नागाङ्कुशान्वितवामकराम्॥
(निर्वाण कलिका)

५. जैन इकोनोग्राफी, पृ० ८-१४४-४५.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शत्रुञ्जय पर्वत पर बने जैन मन्दिरों से प्राप्त संगमरमर की प्रतिमा अष्टभुजा है तथा उपर्युक्त चिह्नों से अंकित है। गिरनार पर्वत (गुजरात) पर बने तेजपाल और वस्तुपाल के जैन मन्दिरों में 'चतुर्भुजा' देवी की प्रतिमा स्थापित है। ऊपर के दोनों हाथों में चक्र तथा नीचे के हाथों में माला एवं शंख सुशोभित हैं। देवी का वाहन गरुड भी दिखाई दे रहा है।

यह शेष २३ शासन देवताओं की नायिका हैं, तथा सूरिमन्त्र, पंच परमेष्ठी और सिद्धचक्र यन्त्र मन्त्रों की अधिष्ठात्री है। इसके यन्त्रों में श्री, ह्री, कीर्त्ति, लक्ष्मी आदि देवता भी प्रतिष्ठित हैं। भैरव पद्मावती कल्प में दो सूक्तों में इस देवी की स्तुति है तथा दोनों में ही यह देवी चक्र तथा गरुड सहित विद्यमान है।[1]

यक्षी—ब्रिटिश म्यूजियम लन्दन में सिंहासन पर बैठी हुई यक्षी की प्रतिमा रखी हुई है। दो भुजाएँ हैं, एक चरण नीचे की ओर है। प्रतिमा बड़ी ही सुन्दर बन पड़ी है। दूसरी प्रतिमा आठ भुजाओं वाली यक्षी की है। इस पर अंकित लेख में यक्षी का नाम सुलोचना दिया गया है। उसके नेत्र सुन्दर हैं तथा उनके ऊपर वाले हाथों में माला है। दायीं ओर एक हाथ खण्डित है, तीसरे हाथ में चक्र है तथा चतुर्थ हाथ वरद मुद्रा में है। बायीं ओर की दूसरी भुजा में दर्पण है, तीसरे में शंख तथा चौथे में एक प्याला है जो टूट गया है। दोनों ओर चँवरधारिणियाँ खड़ी हैं। मस्तक के ऊपर 'जिन' की प्रतिमा है।[2]

श्री लक्ष्मी—धन की देवी के रूप में श्री देवी का वर्णन दिगम्बर-सम्प्रदाय में प्राप्त होता है। यह देवी चार भुजाओं वाली है तथा हाथों में कमल एवं पुष्प विद्यमान हैं। यह गौरवर्ण देवी है।[3]

श्वेताम्बर सम्प्रदाय में यही देवी लक्ष्मी के नाम से प्रसिद्ध है। गजवाहिनी है एवं कमल भुजाओं में सुशोभित है।[4]

प्राचीनकाल से ही लक्ष्मी की पूजा जैन धर्म में होती रही है। धनतेरस के दिन लक्ष्मी की विशेष पूजा सम्पन्न की जाती है। उसी दिन जैन महिलाएँ अपने आभूषणों को धारण करती हैं। लक्ष्मी का वर्णन हिन्दू लक्ष्मी देवी से बहुत भिन्न नहीं है। केवल जैन लक्ष्मी गजवाहिनी है जबकि हिन्दुओं के यहाँ कमलासन होती हैं। इस देवी की अनेक प्रतिमाएँ प्राचीनकाल से लेकर अब तक मिलती रही हैं।[5]

योगिनियाँ—जैन आकर ग्रन्थों में योगिनियों की संख्या ६४ बतलाई गई है। इनके अनुसार ये रौद्र देवता हैं तथा जिन की आज्ञानुसार कार्य करती हैं :—योगिन्यो भीषणा रौद्र देवताः क्षेत्ररक्षकाः।

ये देवियाँ मूलरूप से तान्त्रिक देवियाँ हैं। अग्निपुराण और मन्त्रमहोदधि में इनका वर्णन प्राप्त होता है। किन्तु जैन अनुयायी भी क्षेत्र-रक्षक के रूप में इनकी पूजा करते हैं। ये अधिकतर भयंकर देवियां हैं, कुछ इनमें से सौम्यस्वरूपा भी हैं, क्षेत्रपालों के अधीन इनको स्वीकार किया गया है। इनकी मूर्तियाँ तो अधिक प्राप्त नहीं होती हैं परन्तु मन्त्र और स्तोत्र प्राप्त होते हैं तथा कुछ पाण्डुलिपियों में इनके नाम भी प्राप्त होते हैं।

शान्तिदेवी—ग्रन्थों में इस देवी का वर्णन मिलता है। यह कमल पर बैठी हुई है तथा चार भुजाओं में माला, कमण्डलु, वरदमुद्रा एवं घट सुशोभित है। गौरवर्ण है।[6]

यह देवता जैनधर्म में बिल्कुल नयी है। बौद्धधर्म एवं हिन्दू धर्म में इस प्रकार की किसी देवी का वर्णन नहीं मिलता है। जैन लोग ऐसा विश्वास करते हैं कि यह देवी जैनसंघ की रक्षा करती है एवं संघ को उन्नत करती है।[7]

---

१. जैन इकोनोग्राफ़ी पृ० ३३०-३३१
२. मिडीवल इन्डियन स्कल्पचर, पृ०—४२
३. औं ह्रीं सुवर्णे चतुर्भुजे पुष्पकमलधनुषहस्ते,
श्री देवी मन्दिरप्रतिष्ठाविधाने अत्रागच्छ ।।
४. पीतवस्त्रां सुवर्णाङ्गी पद्महस्तां गजाङ्किताम् ।
क्षीरोदतनयां देवी कामधात्रीं नमाम्यहम् ।।
महालक्ष्म्यै नमः (जैनपांडुलिपिः रामघाट पुस्तकालय)
५. जैन इकोनोग्राफी, पृ०—१८२-१८३
६. शान्तिदेवतां धवलवर्णां कमलासनां चतुर्भुजां,
वरदाक्षसूत्रयुक्तदक्षिणकरां कुण्डिकाकमण्डलुवामकराम् ।
७. श्रीचतुर्विधसंघस्य शासनोन्नतिकारिणी ।
शिवशान्तिकरी भूयात् श्रीमती शान्तिदेवता ।। (प्रतिष्ठाकल्प)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इन देवियों के अतिरिक्त ब्रह्माणी की मूर्ति बघैरा के जैन मन्दिर में मिलती है। इसी प्रकार जयपुर के लूणकरण जी पण्डया जैनमन्दिर में एक देवी की प्रतिमा है जिसमें देवी महिष पर बैठी हुई दिखलाई गई है। अष्टभुजा देवी की चार भुजाओं में तलवार, धनुष, बाण और परशु हैं तथा दूसरी ओर शंख, चक्र एवं दो और वस्तुएं हैं। इन प्रतिमाओं पर निश्चित रूप से तान्त्रिक प्रभाव देखा जा सकता है।

हिन्दू देवी-देवता भी जैन मन्दिरों में स्थान पा जाते हैं। इस प्रकार जैन-धर्म ने हिन्दू धर्म के प्रति उदारता एवं सहिष्णुता का परिचय दिया है। सीता, लक्ष्मी, दुर्गा आदि देवियों की स्थापना एव पूजा गौण देवताओं के रूप में की गई है। देवियों की पूजा इतने अधिक परिमाण में जैनधर्म में प्रचलित थी और अभी भी चल रही है। यह इस बात का परिचायक है कि शक्तिपूजा या शाक्त मत का प्रभाव जैनधर्म पर यथेष्ट पड़ा है। भारत में शक्तिपूजा या देवीपूजा जनमानस में हर प्रदेश में व्याप्त हो गई है। जैनधर्म लोकधर्म होने के कारण इस धारा को रोक नहीं सका और उसने इसे आत्मसात् कर लिया। जैनधर्म की यही विशेषता उसको अभी तक प्रमुख धर्म के रूप में जीवित रख रही है। विद्यादेवी की विशेष पूजा व्यक्त करती है कि जैन आचार्यों ने भारतीय विद्यानिधि में भी अमूल्य योगदान दिया है।

सन्दर्भ ग्रन्थ :—

१. भट्टाचार्य—जैन इकोनोग्राफी, लन्दन—१९३९
२. कैलाशचन्द्र जैन—जैनिज्म इन राजस्थान, शोलापुर—१९६३
३. मोहनलाल भगवानदास झवेरी—श्रीभैरवपद्मावतीकल्प, अहमदाबाद—१९४४
४. रघुनन्दनप्रसाद तिवारी—भारतीय चित्रकला और मूलतत्त्व, दिल्ली—१९७३
५. आचारदिनकर (१४वीं शती)—पाण्डुलिपि
६. प्रोग्रेस रिपोर्ट आफ आर्कियोलोजिकल सर्वे—पश्चिम खंड—१९०५-६
७. पी० बी० देसाई—जैनिज्म इन साउथ इन्डिया, शोलापुर—१९५७
८. एपिग्राफिका कर्णाटिका—खण्ड (II)
९. गुप्ते—इकोनोग्राफी आफ अजन्ता एण्ड एलोरा
१०. बेन्जमीन रोलैन्ड—आर्ट एन्ड आर्किटेक्चर आफ इन्डिया
११. रामप्रसाद चन्दा—मिडीवल इन्डियन स्कल्पचर, दिल्ली

जैनधर्म में प्रत्येक तीर्थंकर के साथ शासनदेवता के रूप में एक यक्ष और एक यक्षिणी का शास्त्रीय विधान किया गया है। तिलोयपण्णत्तिकार ने चौबीस तीर्थंकरों की यक्षिणियों की सूची इस प्रकार से दी है—

चक्रेश्वरी, रोहिणी, प्रज्ञप्ति, वज्रश्रृंखला, वज्रांकुशा, अप्रतिचक्रेश्वरी, पुरुषदत्ता, मनोवेगा, काली, ज्वालामालिनी, महाकाली, गौरी, गांधारी, वैराटी, सोलसा, अनन्तमति, मानसी, महामानसी, जया, विजया, अपराजिता, बहुरूपिणी, कुष्माण्डी, पद्मा और सिद्धायिनी।

तीर्थंकर की माता द्वारा देखे गए सोलह स्वप्नों में लक्ष्मी का उल्लेख आता है। प्रथमानुयोग के धर्म ग्रन्थों में सरस्वती को मेधा एवं बुद्धि की अधिष्ठात्री देवी के रूप में समादृत किया गया है। हरिवंशपुराणकार ने बाईसवें अध्याय में विद्यादेवियों—प्रज्ञप्ति, रोहिणी इत्यादि का उल्लेख किया है। जिनागम में ब्राह्मी, सुन्दरी, सीता, द्रौपदी इत्यादि अनेक गुणसम्पन्न महिलाओं को सती के रूप में स्वीकार किया गया है। शिल्पकारों एवं कवियों ने उनकी प्रतिष्ठा में मूर्तियों का निर्माण एवं ग्रन्थों का प्रणयन किया है। आद्य तीर्थंकर भगवान् ऋषभदेव की यक्षिणी चक्रेश्वरी की मूर्ति कंकाली टीले से प्राप्त होती है। अम्बिका, सरस्वती, पद्मावती इत्यादि अनेक यक्षिणियों एवं देवियों की मनोज्ञ प्रतिमा भी नये उत्खननों से निरन्तर प्राप्त हो रही हैं। किन्तु खेदपूर्वक कहना पड़ रहा है कि अनेक जैन यक्ष-यक्षणियों की मूर्तियों को शास्त्रीय जानकारी के अभाव में अन्य धर्मों के मूर्ति समूह में सम्मिलित कर लिया जाता है। जैन समाज को अपने पुरातात्त्विक वैभव की रक्षा के लिए जैन मूर्ति कला एवं उसके विकास से सम्बन्धित साहित्य का बड़ी मात्रा में वितरण कराना चाहिए।

□ सम्पादक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org